International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 7 Issue 7, July- 2017
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 | Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

स्वंय प्रकाश की कहानियों में ग्रामीण जीवन

सरस्वती कुमारी मीना
पीएच.डी शोधार्थी (हिन्दी विभाग)
दिल्ली विश्वविधालय , दिल्ली – 110007

हिन्दी समाज की तरह हिन्दी कहानी भी अनेक रूढियों से ग्रस्त है, किसी कथाकार की छवि के निर्माण और फिर उसके उस छवि में कैद हो जाने के अनेक उदाहरण मौजूद हैं आधुनिक हिन्दी कहानियों का आरंभ द्विवेदी युग से और उनका विकास प्रेमचंद युग से माना जाता है।

वर्ष 1970–75 के आस–पास जनवादी कहानी हिन्दी कहानी के केन्द्र में आती है। कहानीकारों की एक नई पीढी उभरती है। ये कथा कार अपनी पहचान जनवादी कथाकारों के रूप में बनाते है। समकालीन कहानी लेखन में स्वयं प्रकाश उन गिने–चुने कथाकारों में से हैं जिन्होंने प्रेमचंद द्वारा प्रवर्तित जनपक्षधारा को फिर से मुख्यधारा से जोडा।

समकालीन हिन्दी के प्रकाश स्तम्भ स्वयं प्रकाश को विशिष्ट पहचान दिलाने वाले प्रमुख तत्व है–यथार्थ की उनकी गहरी समझ, उनका वैज्ञानिक दृष्टिकोण और रचनात्मक विकेक, सोद्देश्यता और शिल्प के प्रति उनकी सजगता। इन सभी तत्वों का संश्लेषण उनकी कहानिया का पठनीय एंव रोचक बनाता है। स्वयं प्रकाश का कहानी लेखन इस बात को झुठलाता नजर आता है कि लोकप्रिय कहानियाँ श्रेष्ठ कहानियाँ नही हो सकती।

स्वंय प्रकाश का कहानी कहने का अलग अदांज रहा है। एंटोन चेखव उनके कथा–गुरू थें। प्रेमचन्द कहानी परंपरा के सशक्त कथाकार स्वयं प्रकाश अपने एक कहानी संग्रह की भूमिका में कहते है :–

''कहानी की दुनिया में मैं प्रेमचंद को पढकर नही चेखव को पढकर आया और जिन्होंने मेरी पहली कहानी 'प्रभाव' और पहला कहानी संग्रह 'मात्रा और भार' देखा है वे आसानी से समझ

सकते है कि मैं तब से लेकर अब तक अपने गुरू जी की नकल करने की असफल कोशिश करता रहा हूँ।

यह ज्ञातव्य है कि स्वयं प्रकाश की कहानियाँ शहरी मध्य वर्ग के लिए चर्चित हुई है, किन्तु यहाँ गाँव और ग्रामीण जीवन की हलचल को भी वे जिस संवेदना और गहराई से अंकित करते है वह अपूर्व ह। नये जमाने में बदल रहे गॉव , किसान और वहाँ का जीवन इस कहानियों में साफ–साफ दिखाई देता है। स्वयं प्रकाश उनके दु:ख – दर्द, आशा –निराशा और संघर्ष को लोक के मुहावरे डालकर कहानी गढते है और तब ये कहानियाँ मार्मिक हो जाती है।

स्वयं प्रकाश की 'सूरज कब निकलेगा' कहानी भारतीय ग्रामीण जीवन में मौजूद सामंती मनोवृत्ति , भाग्यवाद और प्रवृत्ति के समक्ष किसान की निरूपायता की कहानी है। कहानी का अंत है– ''अपने यहाँ प्रकृति की पूजा की गई है, उसकी नाक में नकेल नही डाली गई। अपने भैराराम का छोटा बच्चा दूसर दिन दोपहर बाद मर गया। तीसरे दिन उन लोगों को हेलीकॉप्टर से निकाला गया। उसके बाद पुनर्वास की लंगी यातना उन्हें सहनी पडी।

एक अन्य कहानी का कथन है मर रहा हो तो तुम तमाशा देखते रहोगे क्या? तुम लोग क्यों मुझे आसमान पर चढा रहे हो? मैने ऐसा क्या कर दिया जो इंसान को नही करना चाहिए। यह सम्मान मुझे दे रहे हो तो इसका मतलब है, तुम आदमी से उस व्यवहार की उम्मीद नही रखते जो मैने किया क्योंकि मेरे व्यवहार को तुम असाधारण मान रहे हो। तुम लोग दया–माया इंसानियत सब भूल चुके हों। हमारे बच्चे मर रहे थें, हमने उन्हें बचा लिया तो तुम्हारे दिल में खलबली मच गई। यह गाँव बनाम शहर की संवेदना नही है अपितु बाजारवादी समझ के विपरीत एक मासूम मनुष्य का बयान है।

रोचक यह है कि मीडिया की अपभोगवादी और सनसनीवादी प्रवृत्ति पर यह कहानी तब बात कर रही थी जब टीवी भी कायदे से नही आया था। यह नखतसिंह ही था जो कह सकता था। ''मेरा नाम अछालकर तुम सारे गाँव को परेशान कर रहे हो। हमें नही चाहिए ऐसा

अमानुषों से कोई शोहरत नही चाहिए। वैसे भी हम क्या करेंगें तुम्हारी बख्शी हुई इज्जत का क्या काम आयेगी? तुमसे कह रहे है एक कुँआ खुदवा दो, सो तो होता नही, बडे आये है इंटरव्यू लेने वाले।''

इसी तरह 'जो हो रहा है' कहानी में दलित उभार के प्रारंभिक दृश्य आये है जब गाँव से पहली पीढी निकल कर कॉलेज में पढने गयी थी। सत्तर के दशक का यह ग्रामीण चित्र उस संघर्ष की दास्तां सुनाता है जहाँ से बराबरी और सम्मान की लडाई लडते हुए दलित आन्दोलन सफल और सार्थक सिद्व हुआ है। रंजीत जैसे नवयुवक का तेज और पढाई–लिखाई से उपजा आत्मविश्वास इस कहानी को स्वात्त्रयोत्तर दलित आन्दोलन की धरोहर बनाता है।

स्वयं प्रकाश की 'नैनसी का धूडा' ऐसी कहानी है जो यातना, दुःख और संघर्ष से उपजी है। एक बैल की कहानी जिसके समानान्तर उसके मालिक की कहानी भी चलती है और त्रास यह है कि व्यवस्था मे दोनो के लिए कोई जगह नही है। ग्रामीण संस्कृति और अर्थव्यवस्था में मनुष्य और पशु का गहरा संबंध है। अकाल मशीनीकरण और उपभोग की लालसाओं ने इस संबंध को नष्ट करने में कोई कसर नही छोडी है। स्वयं प्रकाश की यह कहानी स आदिम संबंध का मार्सिया है। कहानी के अंत में बैल धूडा अपने गाँव लौटता है लेकिन बदसूरत से बदसूरत जिन्दगी खूबसूरत से खूबसूरत मौत से ज्यादा अच्छी होती है।

'जंगल का दाह' कहानी आदिवासियों के विस्थापन और विकास की अवधारणा से जुडी है। कहानी का लोककथा बन जाना किसी भी कथाकार क लिए उपलब्धि है। यहाँ एक कहानी ऐसा ही स्वाद देती है जिसमें खेत और पगडंडी आपस में बात करते है। 'बिछुडने से पहले' शीर्षक से लिखी यह कहानी विकास की महानता का प्रत्याख्यान रचती है। खेत और पगडंडी की बाते चल रही है और खेत उन दिनों की कल्पना कर रहा है जब पगडंडी की जगह सडक बन जायेगी–जमीन के भाव बढ जायेगें। दुकाने निकल जायेंगी। गरम–गरम छलेबी छनेगी। पगडंडी का जवाब है– 'जलेबी खायेगा मरजाना। हवस देखों इसकी । पता पडेगी। जब होयेगा।' हवस शब्द दिनों बाद कहानी में आया है और देखिये तो खाने के प्रसंग में।

ध्यान से देखे तो यह बात मामूली नही है। विकास की हवस से जो निकल रहा है वह क्या है ? विस्थापन। गरीबी। विनाश। कथाकार इशारे में सब कह दे रहा है।

लोककथा की शैली में लिखी गई 'कानदांव' कहानी का इशारा दूर तक जा रहा है' तो 'संधान' कहानी में देशज स्थानिकता में रास्ता खोजने की कोशिश। 'जगल का दाह' कहानी तथा कथित मुख्यधारा और हाशियें के लोगों के बीच के विभेद को बारीकी से बताती है। कहानी बडे लोगों के मन में मौजूद अहंकार और हिकारत को स्पष्ट बताती है। कि कैसे आदिवासियों को मनुष्य ही नही माना जा रहा , हाँ अपने लाभ–स्वार्थ के लिए उनका जैसे उपयोग हो सकता है वह करने के लिए आधुनिक सभ्य व्यवस्था तैयार है। तीर चलाना इनसे सीखना है लेकिन मामा सोन से नही, आचार्य शोण से, उन्हें श्रेय ना मिल सके इसकी सारी व्यवस्था है।

कहना न होगा कि भूंमडलीकरण के बाद आये बदलावों को समझने का एक रास्ता भारत के विशाल ग्रामीण संसार से जाता है और स्वयं प्रकाश की ये कहानियाँ उस ग्रामीण भारत के सही दृश्यों को अंकित करती है।

स्वयं प्रकाश ने अपनी कहानियों में स्थानीय भाषा के शब्दों और वाक्याशों के प्रयोग को महत्व दिया है। उन्होंने अपनी कहानियों में भाषा को वहाँ वर्णित परिवेश के अनुसार बडे ही जतन से बेहद कलात्मक ढंग से ढाला है। यही कारण है कि उनके पात्र सजीव एंव विश्वसनीय लगते है। उन्होने परसाई और ज्ञानरंजन की भाषा को आगे बढाया है। सुपरिचित समालोचक नवल किशोर का मत हैः–

''कहानी भाषा की उनकी (परसाई व ज्ञानरंजन) परंपरा को स्वयं प्रकाश ने आगे बढाया और महारत हासिल की है ––––– यह भाषा उनकी कहानियों को बेहद पठनीय बनाती है। स्वयं प्रकाश की यह भाषा पाठक को गुदगुदाने के लिए नही है वह लेखकीय संदेश से उसे अंततः झक–झोरेने के लिए है''

इस प्रकार स्वयं प्रकाश की कहानियों में ग्रामीण परिवेश विविध स्तरों पर विभिन्न अर्थो को उद्घाटित करता है। कहीं वह पात्रा की व्यक्तिगत जिन्दगी के प्रति अतिसंवेदनशील है तो कहीं सामाजिक व्यवस्था के प्रति आक्रोश के भावों को व्यक्त करते है। इसलिए ये कहानियाँ एक और संघर्षरत व्यक्ति की दयनीय स्थिति तो दूसरी और सामाजिक जीवन में व्याप्त क्रूर विसंगतियों को उजागर करती है।

संदर्भ स्चीः–

1. सूरज कब निकलेगा, 1981 (प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली)
2. बनास जन पत्रिका
3. आयेंगे अच्छे दिन भी, 1991 (राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली)